न्यायाधीश माननीय एच. एस. बरार के समक्ष .

राम कुमार, याचिकाकर्ता

बनाम

हरियाणा राज्य, उत्तरदाता

***1994 क्र .*एम. सं. 520-एम.**

31 जनवरी, 1095

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973-धारा 482-खाद्य मिलावट *अधिनियम,* 1954-धारा *1,16/क-सारांश प्रक्रिया-किन परिस्थितियों में एक मजिस्ट्रेट* संक्षिप्त *प्रक्रिया से हटकर वारंट मामले की प्रक्रिया का सहारा ले सकता है- वारंट मामले की प्रक्रिया को क्यों अपनाया जाना है इसके लिए मजिस्ट्रेट के लिए पक्षों को सुनना और कारणों को दर्ज करना अनिवार्य है -ऐसा करने में विफलता–परिवाद को रद्द किया जाना चाहिए।*

अभिनिर्धारित, स्वयं धारा 16-ए के तहत यह।प्रदान किया जाता है कि किन परिस्थितियों में मजिस्ट्रेट एक संक्षिप्त प्रक्रिया से हटकर वारंट मामले की *प्रक्रिया* का सहारा ले सकता है।अधिनियम की धारा 16-ए के दूसरे प्रावधान के अनुसार, मजिस्ट्रेट संक्षिप्त प्रक्रिया से केवल तभी हट सकता है जब उसे यह प्रतीत हो कि मामले की प्रकृति ऐसी है कि एक वर्ष से अधिक की अवधि के लिए कारावास की सजा पारित नहीं करनी पड़ सकती है या कि किसी अन्य कारण से मामले का संक्षिप्त परीक्षण करना अवांछनीय था। उस स्थिति में मजिस्ट्रेट के लिए पक्षों को सुनना और उस आशय का आदेश दर्ज करना अनिवार्य था। मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट धारा 16-ए के तहत कानून के विशिष्ट प्रावधानों का पालन करने में विफल रहे हैं। वह यह इंगित करने के लिए कोई कारण देने में विफल रहे हैं कि मामले की प्रकृति क्या थी कि एक वर्ष से अधिक की अवधि के लिए कारावास की सजा दी जा सकती है।उन्होंने कोई अन्य कारण भी नहीं बताया है, जो उनके अनुसार, मामले को संक्षेप में सुनना अवांछनीय हो सकता है।

(पैरा 11)

इसके अलावा यह अभिनिर्धारित किया गया कि मजिस्ट्रेट संक्षिप्त प्रक्रिया से वारंट मामले की प्रक्रिया में बदलने से पहले अधिनियम की धारा 16-ए के तहत प्रदान किए गए कानून के विशिष्ट प्रावधानों के अनुसार अपनी न्यायिक राय बनाने के लिए बाध्य था, जिसकी मामले में कमी है और मजिस्ट्रेट की ओर से इस गलती ने याचिकाकर्ता की अनुच्छेद 21 से उत्पन्न त्वरित सुनवाई की संवैधानिक गारंटी को छीन लिया है।

(पैरा 12)

इसके अलावा यह अभिनिर्धारित किया गया कि मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, भिवानी के आदेश को सभी कोणों से देखा जाने के बाद खारिज किए जाने के लिए उत्तरदायी है क्योंकि उसने अधिनियम की धारा 16-ए के अनिवार्य प्रावधानों का पालन निम्नलिखित तरीके से नहीं किया है (ए) उन्होंने यह अभिनिर्धारित करने वाले कारण नहीं दिए हैं कि मामले की प्रकृति ऐसी थी कि एक वर्ष से अधिक की अवधि के लिए कारावास की सजा पारित करनी पड़ सकती है या किसी अन्य कारण से वारंट प्रक्रिया में बदलना आवश्यक थाःऔर (ख) वारंट मामले की प्रक्रिया को अपनाने से पहले अभियुक्त को सुनवाई का अवसर नहीं देना।

(पैरा 12)

ओ. पी. शर्मा, अधिवक्ता, *याचिकाकर्ता के लिए।*

नीना मदान, ए. ए. जी. हरियाणा, *उत्तरदाता के लिए।*

निर्णय

न्यायाधीश हरफुल सिंह बरार,

(1) दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत इस याचिका के अंतर्गत खाद्य मिलावट रोकथाम अधिनियम की धारा 16 (1) (ए) के साथ पठित धारा 7 के तहत भिवानी के मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट श्री बी. के. अग्रवाल के न्यायालय में खाद्य मिलावट अधिनियम, 1954 (संक्षेप में, अधिनियम) कि कोर्ट में दायर शिकायत को रद्द करने कि प्रार्थना की

गई है।

(2) संक्षेप में, तथ्यात्मक स्थिति इस प्रकार हैः

(3) खाद्य निरीक्षक ने 16 दिसंबर, 1987 को आरोपी याचिकाकर्ता से गाय के दूध का नमूना लिया। उचित औपचारिकताओं को पूरा करने के बाद, नमूना विश्लेषण के लिए सार्वजनिक विश्लेषक के पास भेजा गया था। विश्लेषण पर, यह मिलावटी पाया गया क्योंकि इसमें गाय के दूध के न्यूनतम निर्धारित मानक के रूप में क्रमशः 4 प्रतिशत दूध की वसा और 8 प्रतिशत प्रति दूध ठोस पदार्थ वसा नहीं थे, जबकि 3 प्रतिशत दूध वसा और 8 प्रतिशत गैर वसा वाले दूध ठोस पदार्थ थे।

(4) भिवानी के मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष शिकायत दर्ज करने पर, निचली अदालत ने आरोपी-याचिकाकर्ता को *अपने* 19 फरवरी, 1988 के आदेश के अनुसार 25 मार्च, 1988 के लिए तलब किया और आरोपी-याचिकाकर्ता के खिलाफ आगे बढ़ने के लिए अधिनियम की धारा 16-ए में उल्लिखित संक्षिप्त प्रक्रिया को अपनाया। अभियुक्त 25 मार्च, 1988 से विचारण न्यायालय में उपस्थित हो रहा था, लेकिन 6 अगस्त, 1993 को एक अभि. ग. के अलावा किसी भी अभियोजन पक्ष के गवाह से पूछताछ नहीं की गई और उसी तारीख को विचारण न्यायालय ने एक आदेश पारित किया था कि इसलिए न्यायालय इस मामले की सुनवाई में संक्षिप्त प्रक्रिया के बजाय वारंट प्रक्रिया को अपनाएगा। 6 अगस्त, 1993 के आदेश की वास्तविक प्रति इस याचिका के साथ अनुलग्नक पी4 के रूप में संलग्न की गई है।

(5) याचिका में, शिकायत व समन आदेश को रद्द करने के लिए दो मुख्य आधार लिए गए हैं, (i) कि नमूना लिए जाने को छह साल से अधिक समय बीत चुका है और आरोपी याचिकाकर्ता निचली अदालत द्वारा की गई किसी भी ठोस कार्यवाही के बिना मुकदमे का सामना कर

रहा है।6 अगस्त, 1993 को ही निचली अदालत द्वारा यह आदेश दिया गया था कि मामले की सुनवाई वारंट मामले के रूप में की जाएगी न कि संक्षिप्त मामले के रूप में, और अदालत में केवल एक गवाह का परीक्षण किया गया था ।इस तरह, अभियुक्त-याचिकाकर्ता का त्वरित सुनवाई का अधिकार, जो एक नागरिक का अपरिहार्य मौलिक अधिकार है, छीन लिया गया है। ऐसी स्थिति में, अभियुक्त-याचिकाकर्ता शिकायत और समन आदेश और उससे उत्पन्न होने वाली किसी भी बाद की कार्यवाही को रद्द करने के लिए प्रार्थना करता है; और (ii) कि संक्षिप्त प्रक्रिया से वारंट प्रक्रिया में बदलते समय, विद्वत विचारण मजिस्ट्रेट ने अधिनियम की धारा 16-ए के अनिवार्य प्रावधानों का उल्लंघन किया है। अधिनियम की धारा 16-ए के तहत, याचिकाकर्ता के अनुसार, यह अनिवार्य है कि अदालत को संक्षिप्त प्रक्रिया को छोड़ने से पहले याचिकाकर्ता को सुनना चाहिए और वारंट प्रक्रिया को अपनाते समय आरोपी को सुनना चाहिए और न्यायालय को संक्षिप्त प्रक्रिया से वारंट प्रक्रिया में **बदलते समय** अपने कारण देने चाहिए।मजिस्ट्रेट का वर्तमान मामले को वारंट मामले के रूप में चलाने का आदेश एक सकारण आदेश नहीं है और उन्होंने संक्षिप्त प्रक्रिया से वारंट मामले की प्रक्रिया में बदलने का कोई कारण नहीं बताया है। अभियुक्त को सुनवाई का अवसर भी नहीं दिया गया।

(6) प्रतिवादी-राज्य की ओर से श्री अभय राम, खाद्य निरीक्षक, भिवानी द्वारा जवाब दायर किया गया है, जिसमें कहा गया है कि ट्रायल मजिस्ट्रेट संक्षिप्त प्रक्रिया से वारंट प्रक्रिया में बदलने के लिए सक्षम था और शिकायत केवल इस आधार पर रद्द करने के लिए उत्तरदायी नहीं है कि आरोपी याचिकाकर्ता पिछले छह वर्षों से मुकदमे का सामना कर रहा है।

(7) पक्षों के विद्वान वकील को सुना गया है और मामले के अभिलेखों

पर विचार किया गया है।मैं पहले दूसरे आधार से निपटूंगा, क्योंकि इस मामले के अंतिम निर्णय के लिए पहला आधार दूसरे के साथ निकटता से जुड़ा हुआ है।

(8) याचिकाकर्ता के लिए विद्वान वकील के पहले तर्क से निपटने के लिए कि मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट का आदेश जिसमे अधिनियम की धारा 16-ए के तहत प्रदान की गई संक्षिप्त प्रक्रिया को अपनाने के बजाय उन्होंने मामले को वारंट मामले के रूप में चलाने का आदेश दिया क्योंकि मामले को वारंट मामले के रूप में चलाने के लिए कोई कारण नहीं दिया गया है और आरोपी को ऐसा करने से पहले सुनवाई का कोई अवसर नहीं दिया गया है, इसलिए वांछनीय होगा अधिनियम की धारा 16-ए के कुछ वैधानिक प्रावधानों पर ध्यान देना जो निम्नलिखित शर्तों में है

> "16-ए. मामलों का *संक्षिप्त परीक्षण करने की अदालत* की शक्ति- दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) में कुछ भी निहित होने के बावजूद, धारा 16 की उप-धारा (1) के तहत सभी अपराधों का मुकदमा राज्य सरकार द्वारा या महानगर मजिस्ट्रेट द्वारा इस संबंध में विशेष रूप से सशक्त प्रथम श्रेणी के न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा संक्षिप्त तरीके से किया जाएगा और उक्त संहिता की धारा 262 से 265 (दोनों सहित) के प्रावधान, जहां तक हो सके, ऐसे विचआरण पर लागू होंगे।
>
> बशर्ते कि इस धारा के तहत संक्षिप्त मुकदमे में किसी भी दोषसिद्धि के मामले में, मजिस्ट्रेट के लिए एक वर्ष से अधिक की अवधि के लिए कारावास की सजा पारित करना विधिसम्मत होगा।बशर्ते कि जब इस धारा के तहत संक्षिप्त मुकदमे के प्रारंभ में या प्रक्रिया में, मजिस्ट्रेट को ऐसा प्रतीत होता है कि मामले की प्रकृति ऐसी है कि एक वर्ष से अधिक की अवधि के लिए कारावास की सजा पारित करनी पड़ सकती

है या कि किसी अन्य कारण से, मामले का संक्षिप्त रूप से परीक्षण करना अवांछनीय है, तो मजिस्ट्रेट पक्षों को सुनने के बाद, उस आशय का आदेश दर्ज करेगा और उसके बाद किसी ऐसे गवाह को वापस बुलाएगा जिसकी जांच की गई हो और वह उक्त संहिता द्वारा प्रदान की गई तरीके से मामले की सुनवाई करे या पुनः सुनवाई करे ।"

(9) यह इस संदर्भ में मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, भिवानी के आदेश को भी पुनः प्रस्तुत करना ठीक होगा , जो नीचे दिया गया है।

"उपस्थित: दया किशन संदल, राज्य के जी. एफ. आई।अभियुक्त जमानत पर वकील के साथ ।

एक अभि . ग . मौजूद है लेकिन-25 *मार्च,* 1989 के आदेश के अनुसार; अभियुक्त को पी. एफ. अधिनियम की धारा 7 के साथ पठित धारा 16 (1) (ए) के तहत नोटिस दिया गया था। चूँकि धारा 16 (1) (ए) के तहत दंडनीय अपराध करने के लिए सजा एक वर्ष से अधिक हो सकती है, इसलिए मुझे नहीं लगता कि मामले का संक्षिप्त तरीके से परीक्षण करना उचित है। इसलिए मैं मामले को वारंट मामले के रूप में चलाने का आदेश देता हूं। एक पीडब्लू मौजूद रहता है और उसकी जांच की जाती है।अभियोजन पक्ष ने आरोप-पूर्व साक्ष्य को बंद कर दिया।अब 13 अगस्त1993 को अभियोग पर विचार करने के लिए इस मामले को लिया जाएगा।

एसडी/-

सीजेएम, भिवानी 6-8-1993 "

(10) प्रस्तुत मामले में, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के आदेश में किसी भी कारण का खुलासा नहीं किया गया कि क्या वह इस मामले के तथ्यों

से संतुष्ट थे कि मामले की प्रकृति इस प्रकार है कि एक वर्ष से अधिक की अवधि के लिए कारावास की सजा पारित करनी पड़ सकती है या किसी अन्य कारण से मामले को संक्षेप में चलाना वांछनीय है।यदि मजिस्ट्रेट ने केवल यह कहकर मामले को वारंट मामले के रूप में चलाने का फैसला किया था कि चूंकि अधिनियम की धारा 16 (1) (ए) के तहत अपराध को सह-निर्धारित करने के लिए सजा एक वर्ष से अधिक हो सकती है और उस स्थिति में वह मामले को संक्षिप्त तरीके से चलाना उचित नहीं समझता है, तो उसने निश्चित रूप से अधिनियम की धारा 16-ए के अनिवार्य प्रावधानों का उल्लंघन किया है, जिसमें कहा गया है कि विशेष रूप से यह उपबंध करता है कि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) में किसी बात के होते हुए भी, धारा 16 की उप-धारा (1) के तहत सभी अपराधों का मुकदमा राज्य सरकार द्वारा या महानगर मजिस्ट्रेट द्वारा इस संबंध में विशेष रूप से सशक्त प्रथम श्रेणी के न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा संक्षिप्त तरीके से किया जाएगा और उक्त संहिता की धारा 262 से 265 (दोनों सहित) के प्रावधान, जहां तक हो सके, ऐसे मुकदमे पर लागू होंगे।

(11) विधानमंडल ने अपने विवेक से अधिनियम की धारा 16-ए को विशेष रूप से अधिनियमित किया है और वे इस तथ्य से अवगत थे कि धारा 16 (1) (ए) के तहत किसी अपराध के दोषी व्यक्ति को अधिकतम तीन साल के कारावास और एक हजार रुपये से कम की सजा नहीं दी जा सकती है। हालाँकि, यह धारा 16-ए के तहत ही प्रदान किया गया है कि किस परिस्थिति में मजिस्ट्रेट एक संक्षिप्त प्रक्रिया से हटकर और वारंट मामले की प्रक्रिया का सहारा ले सकता है।अधिनियम की धारा 16-ए के दूसरे प्रावधान के अनुसार, मजिस्ट्रेट संक्षिप्त प्रक्रिया से केवल तभी अलग हो सकता है जब उसे यह प्रतीत हो कि मामले की प्रकृति ऐसी है कि एक वर्ष से अधिक की अवधि के लिए कारावास की सजा पारित नहीं करनी पड़ सकती है या कि किसी अन्य कारण से मामले का संक्षिप्त

परीक्षण करना अवांछनीय था।उस स्थिति में, मजिस्ट्रेट के लिए पक्षों को सुनना और उस आशय का आदेश दर्ज करना अनिवार्य था और उसके बाद किसी भी गवाह को वापस बुलाना, जिसकी जांच की गई हो और उक्त संहिता द्वारा प्रदान किए गए तरीके से मामले की सुनवाई या पुनः सुनवाई करना अनिवार्य था। प्रस्तुत मामले में, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट धारा 16-ए के तहत प्रदान किए गए क़ानून के विशिष्ट प्रावधानों का पालन करने में विफल रहे हैं। वह यह इंगित करने के लिए कोई कारण देने में विफल रहे हैं कि मामले की प्रकृति क्या थी कि एक वर्ष से अधिक की अवधि के लिए कारावास की सजा दी जा सकती है।उन्होंने कोई अन्य कारण भी नहीं बताया, जो उनके अनुसार, मामले को संक्षेप में सुनाना अवांछनीय हो सकता है।वारंट प्रक्रिया की ओर रुख करते हुए, उन्होंने बस इतना कहा है कि "चूंकि धारा 16 (1) (ए) के तहत दंडनीय अपराध करने के लिए सजा एक साल से अधिक हो सकती है, इसलिए मुझे नहीं लगता कि मामले का संक्षिप्त तरीके से परीक्षण करना उचित है।" आदेश या इस मामले के रिकॉर्ड से यह स्पष्ट नहीं है कि वारंट प्रक्रिया में बदलने से पहले मजिस्ट्रेट ने पक्षकारों की कोई सुनवाई की जो अधिनियम की धारा 16-ए की आवश्यकता है। याचिकाकर्ता ने याचिका में विशेष रूप से आरोप लगाया है कि विवादित आदेश पारित करने से पहले मजिस्ट्रेट द्वारा उन्हें सुनवाई का कोई अवसर नहीं दिया गया था।इसके अलावा, इस संबंध में याचिका में किए गए विशिष्ट दावे का राज्य की ओर से दायर लिखित बयान में भी खंडन नहीं किया गया है।अधिनियम की धारा 16-ए के प्रावधानों की अनिवार्य प्रकृति का सवाल अब अनिर्णीत विषय नहीं है। अधिनियम की धारा 16-ए की अनिवार्य प्रकृति की व्याख्या इस न्यायालय की एक पूर्ण पीठ द्वारा वर्ष 1984 में ***बुध राम और एक अन्य बनाम हरियाणा राज्य***[1] *में की गई* है।***बुध राम के मामले (उपर्युक्त)*** में यह निर्णय दिया गया *है कि पहली बार* में धारा 16 (1) (ए) के तहत

[1] 1984 (II) F.A.C. 179.

प्रत्येक मामले को अनिवार्य रूप से संक्षिप्त तरीके से चलाया जाएगा, जब तक कि मजिस्ट्रेट ने उक्त प्रावधान में उल्लिखित कारणों के लिए आपराधिक प्रक्रिया संहिता द्वारा निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार अपराधी पर मुकदमा चलाना आवश्यक नहीं समझा।

(12) मजिस्ट्रेट संक्षिप्त प्रक्रिया से वारंट मामले की प्रक्रिया में बदलने से पहले अधिनियम की धारा 16-ए के तहत प्रदान किए गए क़ानून के विशिष्ट प्रावधानों के अनुसार अपनी न्यायिक राय बनाने के लिए बाध्य था, जो प्रस्तुत मामले में कमी है और मजिस्ट्रेट की ओर से इस गलती ने अनुच्छेद 21 से निकलने वाले त्वरित मुकदमे की याचिकाकर्ता की संवैधानिक गारंटी को छीन लिया है।भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के प्रावधान हमें याद दिलाते हैं कि त्वरित सुनवाई का अधिकार एक नागरिक का अपरिहार्य मौलिक अधिकार है।अभियुक्त को मजिस्ट्रेट की गलती से त्वरित सुनवाई से वंचित नहीं किया जा सकता था, जिसने संक्षिप्त तरीके से मामले की सुनवाई नहीं करने में अवैधता की, लेकिन धारा 16-ए के दूसरे प्रावधान के अनुसार बिना कोई कारण बताए वारंट प्रक्रिया का सहारा लिया। उनकी लापरवाही के कारण इस मामले में मुकदमा तेजी से पूरा नहीं हो सका।अब, इस मामले के तथ्यों को इस पृष्ठभूमि में देखते हुए, रिकॉर्ड के सामने यह स्पष्ट है कि शिकायत वर्ष 1988 में अदालत में दायर की गई थी, जिसके परिणामस्वरूप आरोपी को तलब किया गया था, लेकिन आरोपी का मुकदमा वर्ष 1993 तक चला, जब मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने 6 अगस्त, 1993 के अपने आदेश के अनुसार आदेश दिया कि मामले की सुनवाई वारंट मामले के रूप में की जाए, लेकिन *अधिनियम* की धारा 16-ए के तहत प्रदान की गई संक्षिप्त प्रक्रिया को अपनाए बिना संक्षिप्त तरीके से नहीं। इस तरह, मुकदमा पांच साल से अधिक समय तक चला है, अब तक आरोपी की कोई गलती नहीं है, और सटीक होने के लिए, अदालत की गलती के

कारण मुकदमा वस्तुतः शुरू नहीं हुआ है।ऐसा प्रतीत होता है कि मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने 6 अगस्त, 1993 का विवादित आदेश पारित करने से पहले अधिनियम की धारा 16-ए के प्रावधानों पर एक नज़र डालने की भी जहमत नहीं उठाई।भिवानी के मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के आदेश को सभी कोणों से देखा जाए तो उसे रद्द किया जा सकता है क्योंकि उन्होंने अधिनियम की धारा 16-ए के अनिवार्य प्रावधानों का पालन नहीं किया है क्योंकि (ए) यह मानते हुए कारण नहीं दिए हैं कि मामले की प्रकृति ऐसी थी कि कारावास की सजा एक वर्ष से अधिक देनी पड़ सकती है या किसी अन्य कारण से वारंट प्रक्रिया में बदलना आवश्यक था; और (बी) वारंट मामले की प्रक्रिया को अपनाने से पहले आरोपी को सुनवाई का अवसर नहीं देना।

(13)इस मामले की विषम परिस्थितियों में, जब मुकदमा इतने लंबे समय तक अभियुक्त की गलती के आधार पर नहीं, बल्कि मजिस्ट्रेट द्वारा अपनाई गई गलत प्रक्रिया और दूध में मिलावट के प्रतिशत को देखने के कारण, यानी 0.6 प्रतिशत दूध की वसा की कमी और 0.50 प्रतिशत दूध के ठोस पदार्थ वसा नहीं थे, तो मुझे लगता है कि आरोपी-याचिकाकर्ता की पीड़ा को और अधिक समय तक बढ़ाने के लिए कोई उपयोगी उद्देश्य पूरा नहीं होगा।

(14)नतीजतन, इस याचिका को स्वीकार करें, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के 6 अगस्त, 1993 के आदेश को दरकिनार करते हुए, शिकायत और उसके बाद की कार्यवाही को रद्द कर दें।

जे एस टी।

अस्वीकरण: स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय, वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके, और किसी अन्य

उद्देश्य के लिया इसका उपयोग नहीं किया जा सकेगा। सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा।

जिज्ञासा शर्मा
प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी